सरदार सरोवर के विकल्प

सुहास परांजपे व के. जे. जॉय

सरदार सरोवर मामला सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद एक बार पुनः सुर्खियों में है। वाद-विवाद के इस शोर में विकल्प की आवाज़ लगभग दबी है। विकास के नाम पर लोगों को उजाड़ने और जंगल-ज़मीन को डूबो देने का तर्क ही विकल्प की तरह खड़ा दिखता है। क्या इसे स्वीकार कर लिया जाए? सुहास परांजपे और के. जे. जॉय का यह लेख हमें इस शोर में ठहरकर सोचने को विवश करता है। अपने व्यवस्थित शोध और सकारात्मक नज़रिए से यह साबित करता है कि और भी विकल्प हैं। सवाल यह है कि हम समस्याओं के निदान के लिए आयातित आरोपित तकनीक की जी हुजूरी करेंगे या समस्या के विविध पहलुओं पर ध्यान देते हुए तकनीकी का सार्थक और टिकाऊ इस्तेमाल करेंगे। सरदार सरोवर परियोजना एक प्रवृत्ति है जो विकास के नाम पर देश भर में अपना पैर जमा रही है। इस प्रवृत्ति का पोल खोलते हुए परियोजना का वैकल्पिक ढांचा प्रस्तुत करता है यह आलेख

सरदार सरोवर परियोजना पर गतिरोध जारी है। हमने 1995 में एक पुस्तक *सस्टेनेबल टेक्नॉलॉजीः मेकिंग द सरदार सरोवर प्रोजेक्ट वायबल* (हिन्दी अनुवाद *टिकाऊ खुशहाली की ओर*) लिखकर सरदार सरोवर परियोजना की पुनर्रचना का एक प्रस्ताव दिया था। हमारे विचार से वह विकल्प 'परियोजना पर चल रहे विवादों से सम्बंधित समस्त पक्षों के जायज़ हितों व मांगों की पूर्ति करने में समर्थ था और उससे परियोजना के हिमायतियों व आलोचकों के बीच उत्पन्न गतिरोध को तोड़ने में मदद मिल सकती थी। यह 1995 की बात है। इन पांच वर्षों में काफी कुछ घटा है किन्तु एक बात साफ है कि गतिरोध बरकरार है।

आज उस पुस्तक के सार को दोहराते हुए हम कह नहीं सकते कि इस गतिरोध को तोड़ने में वह क्या भूमिका निभा सकता है। क्योंकि स्पष्ट है कि विवाद ने एक युद्ध का रूप ले लिया है और दोनों पक्षों ने बीच का कोई मार्ग छोड़ा नहीं है। ऐसा युद्ध वही पक्ष थोपता है जिसे लगता है कि वह इतना ताकतवर है कि दूसरा पक्ष उससे लड़त-लड़ते थक जाएगा। उल्लेखनीय बात तो यह है कि इस संघर्ष में घाटी के आदिवासियों और किसानों ने अदम्य साहस व संकल्प का परिचय दिया है। उनका यह संकल्प और उनके पक्ष में जुटता जनमत ही शायद परियोजना पर पुनर्विचार का सबब बन सकेगा।

इसके बावजूद हम यहां कुछ ऐसे नज़रियों को रेखांकित करना चाहते हैं। ये नज़रिए सिर्फ सरदार सरोवर के संदर्भ में ही नहीं बल्कि एक व्यापक संदर्भ में भी प्रासंगिक हैं। इस मामले में सार्वजनिक रूप से ज़ाहिर किए गए मत जो भी हों किन्तु बांध समर्थकों व बांध विरोधियों दोनों ने इन विचारों के प्रति एक सकारात्मक रुख दर्शाया है। इस संदर्भ में देखें तो सरदार सरोवर का विकल्प एक उदाहरण है जहां इन विचारों को लागू किया गया है। विकल्प सम्बंधी हमारी पुस्तक में ये सारे विचार मिलकर एक समग्र विकल्प का रूप ले लेते हैं। यहां हम उन विचारों को अलग-अलग प्रस्तुत कर रहे हैं। इनमें से हरेक अपने दम पर गौरतलब है।

विकल्प का सार

पहले तो सरदार सरोवर की मौजूदा परियोजना तथा विकल्प की तुलना करके देखते हैं। यह तुलना हमने तालिका के रूप में प्रस्तुत किया है।

वैकल्पिक प्रस्ताव में भी व्यवस्था है कि गुजरात को उसका 9 एम.ए.एफ. (90 लाख एकड़ फीट) पानी मिल जाएगा। यह पानी बांध की ऊंचाई काफी कम रखते हुए तथा काफी कम ज़मीन डुबाते हुए मुहैया कराया जा सकेगा। सरदार सरोवर से मिलने वाले बिजली के लाभ भी लगभग उतने ही तथा लगभग उतनी ही लागत पर हैं। इनके अलावा गुजरात के सूखाग्रस्त क्षेत्रों को मिलने वाले नर्मदा जल की मात्रा में काफी वृद्धि की जा सकेगी जबकि शेष गुजरात को मिलने वाले सिंचाई वृद्धि के लाभ में कोई खास कमी नहीं आएगी। ऐसा इसलिए सम्भव हो पाया है क्योंकि विकल्प में नर्मदा से लिए जाने वाले जल के बराबर स्थानीय पानी के दोहन की व्यवस्था की गई है। ऐसा करने से सरदार सरोवर का सेवा क्षेत्र 18 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 41 लाख हेक्टेयर हो जाएगा। सेवा क्षेत्र में पानी के समतामूलक व टिकाऊ उपयोग का प्रावधान किया

तालिका 1: सरदार सरोवर की वर्तमान योजना और विकल्प की तुलना

क्रम	मद	वर्तमान योजना	वैकल्पिक योजना
1.	स.स. बांध में भंडारण स्तर	140 मीटर	107 मीटर (90 मीटर बेसलाइन स्तर)
2.	स्थाई डूब	36,000 हेक्टेयर	10,800 हेक्टेयर
3.	विस्थापन	1.5 लाख लोग विस्थापित	विस्थापन में भारी कमी
4.	पुनर्वास	उजाड़े गए, नए क्षेत्र में पुनर्वास	नर्मदा जल की निश्चित मात्रा के आश्वासन के साथ, उसी क्षेत्र में पुनर्वास
5.	अपस्ट्रीम सेवा क्षेत्र	शून्य	1 लाख हेक्टेयर से ज्यादा
6.	गुजरात सेवा क्षेत्र	18 लाख हेक्टेयर	41 लाख हेक्टेयर
	इसमें		
	सौराष्ट्र	3.9 लाख हेक्टेयर (22%)	13.1 लाख हेक्टेयर (32%)
	कच्छ	0.4 लाख हेक्टेयर (2%)	4.0 लाख हेक्टेयर (10%)
	उत्तर गुजरात	3.1 लाख हेक्टेयर (17%)	14.7 लाख हेक्टेयर (36%)
	शेष गुजरात	10.6 लाख हेक्टेयर (59%)	8.9 लाख हेक्टेयर (22%)
7.	स.स. पर ताज़ा बिजली उत्पादन	1400 मेगावॉट (360 करोड़ युनिट)	850 मेगावॉट (260 करोड़ युनिट)
	परियोजना में बिजली की खपत	113.8 करोड़ युनिट	164.6 करोड़ युनिट
	पीक लोड सुविधा	1400 मेगावॉट	1200 मेगावॉट
	गैस-सौर सहउत्पादन	शून्य	200 मेगावॉट
8.	बायोमास के रूप में अतिरिक्त ऊर्जा का उत्पादन	कोई योजना नहीं	न्यूनतम 441 करोड़ युनिट के तुल्य (263 लाख टन)
9.	समतामूलक पानी वितरण तथा टिकाऊ विकास	कोई योजना नहीं	बुनियादी मुद्दा है
10.	कुल लागत	13,000 करोड़ रु.	12,920 करोड़ रु.
	इसमें स्थानीय रोजगार व सेवाओं पर खर्च	नगण्य	3,620 करोड़ रु.
11.	लागत वसूली	ऐसी कोई योजना नहीं	बुनियादी व आर्थिक सेवा में अन्तर के आधार पर वसूली
12.	गुजरात का पानी का हिस्सा	90 लाख एकड़ फीट	90 लाख एकड़ फीट
13.	जंगलों का नुकसान	13,700 हेक्टेयर (अधिकतर अच्छी गुणवत्ता का जंगल)	डूब में 3000 हेक्टेयर साथ में पुनर्वास हेतु 10,000 हेक्टेयर (कम गुणवत्ता का जंगल)
14.	सेवा क्षेत्र में स्थाई वनस्पति आच्छादन	कोई प्रावधान नहीं	11 लाख हेक्टेयर (अपस्ट्रीम जलाशय के नज़दीक के वन क्षेत्र क 23000 हेक्टेयर)

गया है। परियोजना के सेवा क्षेत्र की लगभग एक-तिहाई ज़मीन पर स्थायी वृक्ष आच्छादन की परिकल्पना है। वैकल्पिक प्रस्ताव में 263 लाख टन कोयले के बराबर विकेन्द्रित बायोमास ऊर्जा का प्रावधान है। यह ऊर्जा एक विकेन्द्रित औद्योगिक तंत्र को सहारा दे सकेगी।

ज़्यादा महत्वपूर्ण बात तो वैकल्पिक रणनीति के कुछ घटक हैं जिनकी बदौलत यह विकल्प सम्भव हो सकता है। हमने पुस्तक में इन घटकों की चर्चा तीन हिस्सों में की है : पहले घटक का सम्बंध केन्द्रीय परिवहन व प्रदाय तंत्र से है, दूसरा स्थानीय तंत्र में समता व टिकाऊपन से सम्बंधित है तथा तीसरे का सम्बंध ऊर्जा के परिप्रेक्ष्य से है जो एक विकेन्द्रित औद्योगिक तंत्र की ओर बढ़ने में मदद कर सकता है। हम यहां इनकी चर्चा इसी क्रम में कर रहे हैं।

जल संग्रहण का विकेन्द्रीकरण : छोटे-बड़े का एकीकरण

विकल्प की मान्यता है कि यदि छोटे तंत्रों से उच्च विश्वसनीयता की सेवा प्राप्त करना है तो बड़े संसाधनों का दोहन ज़रूरी है। वैकल्पिक प्रस्ताव में विवाद को बड़े बनाम छोटे के रूप में नहीं देखा गया है अपितु इनके बीच के सम्बंधों के आधार पर देखा गया है। यदि सही ढंग से नियोजन व उपयोग किया जाए तो बड़े संसाधन छोटे व स्थानीय तंत्रों को सहारा देकर उनकी विश्वसनीयता और टिकाऊपन दोनों में वृद्धि कर सकते हैं।

बड़े संसाधनों की अधिकांश योजनाओं में माना जाता है कि बांध के पीछे बना जलाशय ही प्रमुख भण्डार है। पूरे तंत्र की योजना इस तरह बनाई जाती है कि बड़े संसाधन से कुल जितने पानी के उपयोग की योजना बनाई जाएगी वह बांध के पीछे भरे पानी के लगभग बराबर होगा। इस परिपाटी को तोड़ते हुए विकल्प सुझाता है कि भण्डारण का विकेन्द्रीकरण किया जाए। इसमें बांध के पीछे बने जलाशय की भूमिका मात्र नियमन की होगी। इससे आशय यह है कि सर्वाधिक या मुख्य भण्डारण स्थानीय जलाशयों में तथा उनके पुनर्भरण द्वारा होगा। इससे बांध के पीछे पानी जमा रखने की ज़रूरत बहुत कम रह जाएगी और डूब में काफी कमी आएगी। इसकी बदौलत बड़े संसाधन से कहीं ज़्यादा मात्रा में पानी का उपयोग किया जा सकेगा।

स्थानीय व बाहरी पानी का एकीकरण

उक्त बड़े-छोटे के एकीकरण से स्थानीय व बाहरी पानी का भी एकीकरण होगा। दरअसल विकल्प में स्थानीय जल संसाधनों के विकास तथा उनके एकीकरण का प्रावधान है ताकि वर्तमान परियोजना की अपेक्षा सेवा क्षेत्र को दुगुना किया जा सके। इसमें निहित बुनियादी सिद्धान्त नया नहीं है। और न ही हम इस मामले में किसी मौलिकता का दावा करते हैं। दरअसल इस विकल्प में हमने इन पहलुओं को बड़े तंत्र के नियोजन में समाविष्ट मात्र किया है। तमिलनाडु के 'तंत्रगत तालाब' (सिस्टम्स टैंक) इस तरह के एकीकरण के उदाहरण हैं। ये वर्षा पोषित तालाब हैं जिन्हें एक बड़े स्रोत से रीफिल किया जाता है। अध्ययन बताते हैं कि इससे इनकी विश्वसनीयता बहुत बढ़ जाती है। हमने सिर्फ इतना किया है कि इस सिद्धान्त को और आगे बढ़ाकर वैकल्पिक तंत्र का आधार बना दिया है। हमें करना सिर्फ इतना होगा कि स्थानीय जल भण्डार रबी के शुरू में भरे हों और बीच में फिर से भर दिए जाएं।

छोटे तंत्रों की दोहरी भूमिका

इस व्यवस्था से छोटे तंत्र दोहरी भूमिका निभाने लगते हैं - स्थानीय जल संसाधनों के दोहन के साधन के रूप में और बड़े स्रोत से प्राप्त होने वाले पानी के भण्डारण के रूप में। बड़े स्रोत के विकेन्द्रित घटक की यह भूमिका भी हो जाती है। गौरतलब है कि स्थानीय तंत्र तो वैसे भी बनाए ही जाने चाहिए। अतः विकल्प में इन तंत्रों का उपयोग बड़े स्रोत से मिलने वाले पानी के भण्डारण हेतु किया गया है। ऐसा करने से बांध के पीछे जलाशय बनाने की लागत बच जाती है। दरअसल लागत बचाने का यह सबसे बड़ा उपाय है। यह बड़े व छोटे तंत्रों के एक एकीकृत नज़रिए से शुरू होता है तथा बड़े तंत्र को छोटे तंत्रों के सहारे के रूप में निर्मित करता है।

कोई भी विवाद जब एक युद्ध का रूप ले लेता है तो दोनों पक्ष बीच का कोई मार्ग नहीं छोड़ते। ऐसा युद्ध वही पक्ष थोपता है जिसे लगता है कि वह इतना ताकतवर है कि दूसरा पक्ष उससे लड़ते - लड़ते थक जाएगा। सरदार सरोवर परियोजना के संघर्ष में उल्लेखनीय बात यह है कि घाटी के आदिवासियों और किसानों ने अदम्य साहस व संकल्प का परिचय दिया है। उनका यह संकल्प और उनके पक्ष में जुटता जनमत ही शायद परियोजना पर पुनर्विचार का सबब बन सकेगा

फीडर नहरें

जाहिर है कि उपरोक्त व्यवस्था हेतु एक अलग किस्म का परिवहन प्रदाय तंत्र ज़रूरी होगा। एक केन्द्रीकृत 'कमान क्षेत्र' की बजाय इसमें स्थानीय स्रोतों के आसपास फैले छोटे-छोटे सेवा क्षेत्र होंगे। इन स्थानीय स्रोतों को 'फीडर नहरों' द्वारा पानी मिलेगा। ये बड़ी-बड़ी नहरें होंगी जिनका उद्देश्य स्थानीय भण्डारण तंत्र को तेज़ी से पानी पहुंचाना होगा। यानी कोई जरूरत नहीं कि बड़े तंत्र का दायरा एक-एक किसान के खेत तक फैला हो। यह दायरा अब स्थानीय व छोटे तंत्र तक सीमित होगा। इस प्रकार से एक केन्द्रीकृत कमान क्षेत्र व्यवस्था से मुक्ति मिलेगी। यहां भी पूरे तंत्र का युक्तियुक्तकरण व सरलीकरण हुआ है।

स्थानीय जलाशयों की विशाल क्षमता

इस बात पर अक्सर ध्यान नहीं दिया जाता है कि स्थानीय जलाशयों की सीमा दरअसल उन्हें प्राप्त होने वाले पानी की सीमा है। इन जलाशयों की वास्तविक भण्डारण क्षमता कहीं ज़्यादा होती है। जब बाहरी पानी उपलब्ध है तो कम विश्वसनीयता वाले जलाशयों को भी संभाला जा सकता है क्योंकि तब इन्हें बार-बार भरना सम्भव हो जाता है। विकल्प में बाहरी पानी को प्राप्त करने वाले छोटे तंत्रों का अनुमान लगाते समय हमने 10 करोड़ घन मीटर से कम क्षमता वाले तंत्रों तक ही ध्यान सीमित रखा था। तंत्र को वाकई एकीकृत बनाने के लिए इस सीमा को मानना ज़रूरी नहीं है। ऐसी स्थिति में तो मध्यम परियोजनाओं को भी इसमें जोड़ा जा सकता है और उनका सेवा क्षेत्र बढ़ाया जा सकता है।

प्रवाहित नदी में बिजली उत्पादन

विकल्प में प्रस्तावित दूसरा महत्वपूर्ण परिवर्तन सरदार सरोवर के बिजली संयंत्र के संचालन को लेकर है। यदि हम यही मानकर चलें कि पनबिजली संयंत्र बांध के पीछे भरे पानी से चलने वाला पीक लोड संयंत्र होगा तो जाहिर है कि परियोजना से मिल सकने वाली बिजली लगभग शून्य हो जाएगी क्योंकि विकल्प में बांध के पीछे भण्डारण बहुत कम होगा और बांध की ऊंचाई भी काफी कम होगी। इसकी जगह यह सुझाया गया है कि मॉनसून के दौरान बिजली संयंत्र को प्रवाहित नदी (रन-ऑफ-दी-रिवर) संयंत्र के रूप में चलाया जाए। मॉनसून की अवधि में पीक लोड के लिए इसे पम्पजनित पनबिजली संयंत्र के रूप में चलाया जाए। इससे परियोजना से मिलने वाला पीक लोड का लाभ पूर्वानुसार मिलता रहेगा और यह वर्तमान सरदार सरोवर से उत्पादित बिजली के करीब ही होता है।

यहां फिर से हम ज़ोर देकर कहना चाहेंगे कि हमने इस पक्ष को सिर्फ इसलिए नहीं जोड़ा है कि सरदार सरोवर के ऊर्जा लाभों को बरकरार रखा जा सकें। मॉनसून में प्रवाहित नदी संयंत्र तथा मॉनसून पश्चात् पम्पजनित जलाशय द्वारा पीक लोड संचालन के अपने फायदे भी हैं। दरअसल हमारा सुझाव तो यह है कि समस्त आकारों की तमाम सिंचाई परियोजनाओं में प्रवाहित नदी पनबिजली संयंत्र जोड़ दिए जाने चाहिए। इससे बिजली क्षेत्र में सचमुच बहुत विशाल व विकेन्द्रित पीक लोड क्षमता उत्पन्न हो जाएगी।

इस संदर्भ में प्रस्तावित एक बुनियादी परिवर्तन की मदद से विकल्प को अपनाने की लागत काफी हद तक जज़्ब की जा सकेगी। बांध की ऊंचाई कम होने के कारण पानी गिरने की ऊंचाई कम हो जाएगी। इसलिए बिजली संयंत्रों में थोड़ा परिवर्तन करना होगा। यदि इन उपकरणों को बनाने का आदेश आज देना हो, तो ऐसे परिवर्तन को शामिल करना ज़्यादा मुश्किल या महंगा नहीं होगा। अलबत्ता यदि उपकरण तैयार हो चुके हैं तो ऐसे परिवर्तन करना असम्भव नहीं, तो मुश्किल अवश्य होगा। लेकिन इन उपकरणों को अन्य स्थानों पर प्रवाहित नदी संयंत्रों में शामिल करना मुश्किल न होगा, बशर्ते कि वहां पानी गिरने की ऊंचाई व अन्य परिस्थितियां समान हों।

मॉनसून पश्चात् बहाव पर असर

ऊपर वर्णित दोनों तत्वों यानी फीडर नहरों के ज़रिए स्थानीय जलाशयों तक पानी के परिवहन तथा प्रवाहित नदी संयंत्र व पम्प जनित पनबिजली द्वारा पीक लोड उत्पादन का नदी की पर्यावरण परिस्थिति पर गहरा असर होगा। चूंकि पानी का एक बड़ा हिस्सा देर मॉनसून या मॉनसून के तुरन्त बाद के दिनों में (मध्य रबी के समय तक पूरा पानी) स्थानीय जलाशयों तक पहुंचाया जाएगा, इसलिए मॉनसून उपरान्त बहाव का बड़ा हिस्सा तो अबाधित रहेगा। इसी प्रकार से मॉनसून पश्चात् अवधि में पीक लोड उत्पादन भी पम्पजनित जलाशय पर निर्भर है। इसलिए इसका असर भी नदी के बहाव पर नहीं पड़ेगा। इसका अर्थ यह है कि बांध के नीचे नदी का मॉनसून उपरान्त पर्यावरण क्रम बरकरार रहेगा, जो कोई साधारण बात नहीं है।

पुनर्वास पर असर

मौजूदा सरदार सरोवर परियोजना से होने वाले विस्थापन की समस्या सचमुच असाध्य है। और इसकी असाध्यता का पता हाल ही में अधिकारियों द्वारा उठाए गए इस तथाकथित प्रगतिशील कदम से चलता है कि वे पुनर्वास के लिए कोई भी ज़मीन बाज़ार भाव पर

खरीदने को तैयार हैं। यानी वे विस्थापितों के लिए आवश्यक ज़मीन खोजने या अर्जित करने में असफल रहे हैं और अब यह विस्थापितों पर छोड़ दिया गया है कि वे अपने पुनर्वास हेतु ज़मीनें खोजें और उसका सौदा करें। दूसरे शब्दों में यह अपनी ज़िम्मेदारी से पल्लू झाड़ने व समस्या की असाध्यता को स्वीकार करने जैसा है। दरअसल वर्तमान सरदार सरोवर परियोजना मात्र पुनर्वास की मानवीय, सामाजिक व पर्यावरणीय लागत की वजह से ही अस्वीकार्य है। और यह लागत घाटी के आदिवासियों को वहन करनी होगी।

वैकल्पिक प्रस्ताव सर्वप्रथम समस्या की विकरालता को कम करके इसे समाधान योग्य बना देता है। इसमें डूब को 70 प्रतिशत तक कम किया गया है। इसका ज़्यादा महत्वपूर्ण असर विस्थापन पर होगा जो मात्र डूब से जुड़ा सवाल नहीं है। पुनर्वास की मानवीय लागत मुख्यतः इस बात से जुड़ी है कि लोगों को उजाड़ा जाएगा। बड़ी संख्या में लोग अपनी सारी या अधिकांश ज़मीन गंवा देंगे और उन्हें सर्वथा नए इलाकों में बसाया जाएगा। यह संख्या डूब के आसपास के क्षेत्र के बढ़ने के साथ बढ़ती है और डूब के आसपास का क्षेत्र डूब क्षेत्र में वृद्धि की अपेक्षा कहीं अधिक तेज़ी से बढ़ता है। अतः पूरी तरह उजड़ने वाले लोगों की संख्या में 70 प्रतिशत से भी अधिक कमी आएगी।

विकल्प के दूसरे पहलू का सम्बंध पुनर्वास पर होने वाले इस असर से है कि विस्थापित लोगों को कहां बसाया जाएगा। आम तौर पर अपस्ट्रीम में रहने वाले परियोजना प्रभावित लोगों को डाउनस्ट्रीम कमान क्षेत्र में ज़मीन दी जाती है। इसमें निहित उद्देश्य प्रशंसनीय है; उन्हें उसी परियोजना की सिंचित भूमि दी जानी चाहिए और यह भूमि हितग्राहियों से अर्जित की जानी चाहिए। और आम तौर पर यदि अपस्ट्रीम क्षेत्रों के विस्थापित और डाउनस्ट्रीम क्षेत्रों के हितग्राही परस्पर रिश्तेदारियों व संस्कृति से सम्बंधित हों तो समस्या को सम्भालने का अनुकूल माहौल बन जाता है किन्तु विस्थापितों के संगठित संघर्ष और दृढ़ता का कोई विकल्प नहीं है। उनके बीच साझा जितना कम होगा, टकराव उतना तीव्र होगा और यदि विस्थापितों व हितग्राहियों के बीच अन्तर समाज में वर्चस्वपूर्ण और दलित विभाजन से मेल खाते हों तो समस्या असाध्य हो जाती है। ऐसे में विस्थापितों को डाउनस्ट्रीम क्षेत्रों में बसाने का प्रयास दोहरी मार करता है - उजड़ना और फिर एक शत्रुवत वातावरण में बिखरना।

इसलिए विकल्प में विस्थापितों का पुनर्वास अपस्ट्रीम क्षेत्र में, उनके अपने सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में ही करने का प्रस्ताव है। परन्तु इसके लिए संख्या इतनी कम होनी चाहिए कि यह सम्भव हो सके। यदि हम वर्तमान सरदार सरोवर परियोजना के पुनर्वास के पैमाने पर देखें तो यह असम्भव है। किन्तु डूब तथा विस्थापित लोगों की संख्या को कम करके विकल्प यह सम्भव बना देता है कि लोगों का पुनर्वास उनके अपने परिवेश में हो सके। पुस्तक में इस सम्बंध में विस्तृत गणनाएं दी गई हैं।

मौजूदा सरदार सरोवर परियोजना से होने वाले विस्थापन की समस्या सचमुच असाध्य है। इसकी असाध्यता का पता हाल ही में अधिकारियों द्वारा उठाए गए इस तथाकथित प्रगतिशील कदम से चलता है कि वे पुनर्वास के लिए कोई भी ज़मीन बाज़ार भाव पर खरीदने को तैयार हैं। यानी वे विस्थापितों के लिए आवश्यक ज़मीन खोजने या अर्जित करने में असफल रहे हैं और अब यह विस्थापितों पर छोड़ दिया गया है कि वे अपने पुनर्वास हेतु ज़मीनें खोजें और उसका सौदा करें। दूसरे शब्दों में यह अपनी ज़िम्मेदारी से पल्लू झाड़ने व समस्या की असाध्यता को स्वीकार करने जैसा है।

इसके लिए डूब को कम करना आवश्यक ज़रूर है लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। इसके लिए अन्य सकारात्मक उपायों पर विचार करना होगा। आखिर अपस्ट्रीम के लोग इस तरह के पुनर्वास को स्वीकार क्यों करें जबकि उन्हें जीवन निर्वाह में कठिनाइयां आ रही हैं, जबकि वे पहले ही एक ऐसे पर्यावरण में हाशियों पर जी रहे हैं जो तेज़ी से बर्बाद होता जा रहा है और जहां उनकी अपनी जीविका का क्षरण हो रहा है? और यह बात भी सामने आएगी कि आम तौर पर परियोजनाओं के लाभ डाउनस्ट्रीम को ही मिलते हैं। ऐसे स्थिति में अपस्ट्रीम क्षेत्र में भी विस्थापितों के पुनर्वास का विरोध होगा।

अतः विकल्प में अपस्ट्रीम क्षेत्र में एक लाख हेक्टेयर के प्रभाव क्षेत्र की व्यवस्था की गई है, जिसमें पुनर्वास कार्य होगा। साथ ही इस विकल्प में पूरे प्रभाव क्षेत्र के लिए नर्मदा के पानी की व्यवस्था की गई है, जिसमें विस्थापित भी शामिल होंगे। अपस्ट्रीम प्रभाव क्षेत्र में पानी पहुंचाने के लिए परियोजना के ऊर्जा घटक में पम्प संचालन हेतु लागत जोड़ी गई है। पानी म.प्र. के हिस्से से लिया जाएगा और

छोटे बनाम बड़े की पूरी बहस में समता व टिकाऊपन का मुद्दा सर्वव्यापी है। छोटे तंत्रों में असमानता या गैर-टिकाऊ प्रकृति कतई कम नहीं होती क्योंकि वे भी उत्पादन की उन्हीं मान्यताओं पर आधारित होते हैं। जिन लोगों के पास पानी प्राप्त करने के साधन हैं और जिनके पास ऐसे साधन नहीं हैं उनके बीच की असमानता छोटी व बड़ी दोनों परियोजनाओं में सामाजिक आर्थिक असमानताओं के साथ घुलमिल जाती है। छोटे तंत्र स्वतः ही समतामूलक या टिकाऊ नहीं होते। उनके संदर्भ में भी टिकाऊपन के लिए सुस्पष्ट नीतियां बनानी होती हैं।

लागत गुजरात के हिस्से में जाएगी जो इस परियोजना का प्रमुख हितग्राही राज्य है। दूसरे शब्दों में पुनर्वास को पूरे क्षेत्र के लिए एक सकारात्मक कदम बना दिया गया है। हम ज़ोर देकर कहना चाहेंगे कि प्रभाव क्षेत्र के चुनाव का आधार कुछ हद तक ही तकनीकी मापदण्डों पर आधारित होगा। यह क्षेत्र कितना बड़ा हो या इसके लिए क्या सकारात्मक कदम उठाए जाएं आदि मुद्दे सामाजिक आधारों पर तय होंगे।

समता व टिकाऊपन

छोटे बनाम बड़े की पूरी बहस में समता व टिकाऊपन का मुद्दा सर्वव्यापी है। छोटे तंत्रों में असमानता या गैर-टिकाऊ प्रकृति कतई कम नहीं होती क्योंकि वे भी उत्पादन की उन्हीं मान्यताओं पर आधारित होते हैं। जिन लोगों के पास पानी प्राप्त करने के साधन हैं और जिनके पास ऐसे साधन नहीं हैं उनके बीच की असमानता छोटी व बड़ी दोनों परियोजनाओं में सामाजिक आर्थिक असमानताओं के साथ घुलमिल जाती है। पानी की कमी वाले क्षेत्रों में पानी को पम्प करने की होड़ में लिप्त छोटे तंत्र भूजल ह्रास का प्रमुख कारण हैं। रियायती दरों पर मिलने वाली बिजली इसे और गम्भीर बना देती है। छोटे तंत्र स्वतः ही समतामूलक या टिकाऊ नहीं होते। उनके संदर्भ में भी टिकाऊपन के लिए सुस्पष्ट नीतियां बनानी होती हैं।

बाहरी पानी की भूमिका

सूखाग्रस्त क्षेत्रों में काम करते हुए हम इस दृढ़ निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यदि इन क्षेत्रों में जीविकाओं को स्थिर और एक स्तर तक विश्वसनीय बनाना है तो सीमित किन्तु निश्चित मात्रा में बाहरी पानी निहायत ज़रूरी है। यह तभी हो सकता है जब बाहरी पानी की आपूर्त्ति की योजना ऐसा सहारा देने के लिए और स्थानीय पानी की पुनर्भरण करने की दृष्टि से बनाई जाए। बदकिस्मती से बाहरी पानी का नियोजन स्वतंत्र रूप से किया जाता है। इसकी योजना बनाते समय स्थानीय संसाधनों के साथ इसके एकीकरण का ख्याल नहीं रखा जाता। इसके चलते दोनों ही तंत्रों में विषमता व गैर टिकाऊपन उत्पन्न हो जाते हैं। विकल्प में इन दोनों को इस तरह जोड़ने का प्रयास है कि समता व टिकाऊपन बढ़े।

बाहरी पानी के उपयोग की शर्तें

हमें लगता है कि इस संदर्भ में पहला कदम यह होगा कि बाहरी पानी के उपयोगकर्त्ताओं व राज्य दोनों पर कुछ शर्तें लगाई जाएं जो समता व टिकाऊपन के लिहाज़ से तैयार की गई हों। फिलहाल ऐसी कोई शर्त नहीं है तथा हमारे सामने एक विचित्र स्थिति है जिसमें बाहरी पानी स्थानीय संसाधनों को सुदृढ़ करने की भूमिका नहीं निभा पाता। ऐसे में होता यह है कि स्थानीय संसाधन टिकाऊ जीविका की ज़रूरतें कदापि पूरी नहीं कर पाते। जिन इलाकों में बाहरी पानी नहीं पहुंचता है वहां इसकी बर्बादी होती रहती है। लिहाज़ा हम नर्मदा पानी के प्रावधान को चार शर्तों से जोड़ते हैं :

(क) स्थानीय तंत्र को नर्मदा का पानी उनके द्वारा किए स्थानीय संसाधनों के विकास व दोहन के अनुपात में मिले। अधिकांश इलाकों में हमने यह अनुपात 1:1 का रखा है।

(ख) पानी की समतामूलक उपलब्धता अर्थात् सेवा क्षेत्र में समस्त परिवारों को जीविका हेतु न्यूनतम पानी मिले। इसके बाद ही पानी आर्थिक सेवा के लिए दिया जाए।

(ग) एक-तिहाई सेवा क्षेत्र पर स्थाई वनस्पति आच्छादन वृक्षरोपण हो (ऊपर ख में उपलब्ध पानी की बदौलत यह सम्भव हो पाएगा)।

(घ) समतामूलक व टिकाऊ उपयोग सुनिश्चित करने हेतु तंत्र का स्वप्रबंधन उपयोगकर्ताओं द्वारा हो।

इनमें से प्रत्येक शर्त का एक विशिष्ट उद्देश्य है। **पहली शर्त** (क) स्थानीय व बाहरी संसाधनों के विकास को जोड़ती है और सुनिश्चित करती है कि स्थानीय तंत्र धीरे-धीरे चुकेंगे नहीं, जैसा कि आज होता है। **दूसरी शर्त** द्वारा यह सुनिश्चित होता है कि सेवा क्षेत्र में पानी की उपलब्धता व्यक्ति के पास उपलब्ध ज़मीन पर निर्भर नहीं होगी, अपितु यह व्यक्ति के जीविका के अधिकार से जुड़ेगी। **तीसरी शर्त** दरअसल, दूसरी शर्त के तहत उपलब्ध कराए

गए पानी से सम्बंधित है तथा इससे पूरे सेवा क्षेत्र में पर्यावरण के उन्नयन के न्यूनतम आधार का निर्माण सुनिश्चित होगा। और अन्तिम शर्त यह सुनिश्चित करेगी कि स्थानीय उपयोगकर्ता इन शर्तों का दायित्व उठाएं।

उपरोक्त प्रत्येक शर्त के साथ राज्य के दायित्व भी जुड़े हैं। राज्य को पर्याप्त धन उपलब्ध कराना होगा ताकि स्थानीय संसाधनों का विकास व दोहन किया जा सके। इसीलिए विकल्प में सेवा क्षेत्र से दुगुने क्षेत्र के वॉटरशेड उपचार का खर्च परियोजना लागत में ही जोड़ा गया है। शेष तीन शर्तों का सम्बंध इस बात से है कि राज्य स्थानीय समुदायों को समर्थ बनाए तथा उन्हें इतना शक्ति सम्पन्न बनाए कि वे ये शर्तें पूरी कर सकें। इसके लिए उपयुक्त कानून, नीतियां व प्रोत्साहन कार्यक्रम बनाने होंगे।

यहां हम उपरोक्त प्रत्येक पहलू की गहराई व बारीकियों में नहीं जा रहे हैं। हमारी पुस्तक में इनकी चर्चा की गई है। ज़रूरत इस बात की है कि इस चर्चा को जारी रखा जाए और एक ऐसे मुकाम पर लाया जाए कि पानी के उपयोगकर्ता इन मुद्दों पर किसी आम सहमति पर पहुंचें और इनके लिए साझा संघर्ष करें। यहां हम इस बात को रेखांकित करना चाहेंगे कि ये पहलू सिर्फ सरदार सरोवर के लिए नहीं बल्कि देश की समस्त सिंचाई परियोजनाओं के लिए प्रासंगिक हैं।

ऊर्जा : अन्तिम मुद्दा

विकल्प के तीनों हिस्सों में एक स्थाई मुद्दा ऊर्जा का है। रुढ़िगत विचारों से हमारा पहला मतभेद वहां होता है जब हम सौराष्ट्र व कच्छ के लिए पानी को पम्प करने का सुझाव देते हैं। इसके अलावा हम यह भी सुझाव देते हैं कि बांध के ऊपर वाले क्षेत्र तथा गुरुत्व कमान के ऊपर वाले क्षेत्रों के लिए भी पानी लिफ्ट किया जाए। यह सुझाव इस अघोषित, अलिखित परिपाटी का उल्लंघन करता है कि यथासम्भव समस्त नहरों में पानी गुरुत्व के अनुरूप बहे। इस परिपाटी ने नहर कमान क्षेत्रों में असमानता के बीज बोए हैं। सर्वप्रथम इसकी वजह से नहरों से ऊपर वाले समस्त क्षेत्र कमान से बाहर हो जाते हैं। इसका यह भी अर्थ होता है कि निचले इलाकों के लोगों को ऊपरी क्षेत्रों की बनिस्बत ज़्यादा पानी मिलता है। ये लोग प्रायः समृद्ध वर्ग के होते हैं। और सबसे गम्भीर बात यह होती है कि इसकी वजह से वॉटरशेड या गांव को एक इकाई के रूप में समानता से पानी नहीं मिल पाता। इसके दो ही समाधान हो सकते हैं। या तो महाराष्ट्र में प्रचलित फड़ व्यवस्था की तरह प्रत्येक परिवार की कुछ ज़मीन कमान क्षेत्र में हो या फिर सबके खेतों तक पानी पहुंचाने के लिए लिफ्ट किया जाए। दूसरे शब्दों में पानी की उपलब्धता का पुनर्वितरण करने की कुछ लागत होती है और यह लागत आर्थिक व ऊर्जा दोनों रूपों में होती है। यह लागत न लगाने का मतलब है समता से इन्कार करना।

एक अघोषित, अलिखित परिपाटी यह बना हुआ है कि यथासम्भव समस्त नहरों में पानी गुरुत्व के अनुरूप बहे। इस परिपाटी ने नहर कमान क्षेत्रों में असमानता के बीज बोए हैं। सर्वप्रथम इसकी वजह से नहरों से ऊपर वाले समस्त क्षेत्र कमान से बाहर हो जाते हैं। इसका यह भी अर्थ होता है कि निचले इलाकों के लोगों को ऊपरी क्षेत्रों की बनिस्बत ज़्यादा पानी मिलता है। ये लोग प्रायः समृद्ध वर्ग के होते हैं। और सबसे गम्भीर बात यह होती है कि इसकी वजह से वॉटरशेड या गांव को एक इकाई के रूप में समानता से पानी नहीं मिल पाता।

विकल्प में इस लागत का प्रावधान है। साथ ही यह भी ध्यान रखा गया है कि यह लागत निर्वाह योग्य हो। इस सम्बंध में पहला सवाल यह है कि इसके लिए ऊर्जा कहां से आएगी। इस ऊर्जा की व्यवस्था दो तरह से की गई है। पहली व्यवस्था यह कि बिजली उत्पादन का प्राथमिक उपयोग पम्पिंग हेतु किया जाएगा। दूसरी यह कि विकल्प में एक बायोमास परिप्रेक्ष्य अपनाया गया है। इसका अर्थ यह है कि पानी का समस्त उपयोग बायोमास उत्पादन में काम आता है। प्रकारान्तर से यह बायोमास ऊर्जा है। पुस्तक में गणना करके दर्शाया गया है कि समतामूलक उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए जितने पानी को लिफ्ट करना होगा उससे पैदा होने वाला बायोमास लिफ्ट में लगने वाली ऊर्जा से कहीं ज़्यादा होगा। दूसरे शब्दों में, लिफ्ट किया गया पानी अतिरिक्त ऊर्जा उत्पादन करके अपने लिफ्ट की भरपाई कर देगा। हां, इसके लिए ज़रूरी होगा कि बायोमास को ऊर्जा के रूप में मान्यता देते हुए तदनुसार नीतियां बनाई जाएं। दरअसल सेवा क्षेत्र का एक-तिहाई स्थाई वृक्षाच्छादन में रहेगा तो यह कार्य हो सकता है।

जाहिर है कि ऊर्जा मात्र एक लागत नहीं है। यह समस्त आधुनिक उद्योग की मुद्रा है और यह एक विकेन्द्रित औद्योगिक तंत्र का रास्ता भी खोल सकती है। इस संसाधन की मात्रा का अनुमान कई तरह से लगाया जा सकता है। हमने यह तरीका अपनाया है कि स्थानीय बायोमास संसाधन से सम्भव समस्त बुनियादी ज़रूरतों की पूर्ति के बाद जो अतिरिक्त बायोमास रहे वही उसकी सम्भावित क्षमता है। हमने बायोमास का अनुमान लगाने के लिए उसके सबसे कम कार्यक्षम उपयोग यानी बतौर ईंधन उपयोग को आधार बनाया

है। इस तरह से गणना करने पर अनुमानित वार्षिक अतिरिक्त बायोमास 450 करोड़ यूनिट बिजली के बराबर आता है। यह सरदार सरोवर द्वारा उत्पन्न अधिकतम संक्रमणकालीन बिजली उत्पादन से ज़्यादा है। यदि ईंधन के अलावा किसी अन्य तरह से इसका उपयोग किया जाए तो यह ऊर्जा का एक विशाल स्रोत है।

पुस्तक में हमने बायोमास ऊर्जा प्राप्ति और उत्पादन की मिलीजुली इकाइयों का उल्लेख किया था। तब से लेकर इनमें काफी प्रगति हुई है। आज इस तरह की कार्यक्षमता कहीं बेहतर हो चुकी है। अलबत्ता यहां उस सबके विस्तार में जाने की गुंजाइश नहीं है।

अन्तिम आग्रह

हमने कोशिश की थी कि परियोजना पर जितना खर्च हो चुका है उसे विकल्प में उपयोग किया जा सके किन्तु जैसे-जैसे परियोजना आगे बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे इसकी अधिकाधिक संरचनाओं का विकल्प में उपयोग मुश्किल होता जाता है। इसके अलावा इसकी सामाजिक लागतें भी वापस लौटाने योग्य स्थिति में नहीं रह जाती हैं। इस लिहाज़ से एक निर्णायक मुकाम तब आएगा जब बांध 90 मीटर की ऊंचाई पर पहुंचेगा। यह विकल्प की आधार रेखा है। इसके बाद ऊंचाई बढ़ने पर हर मीटर के लिए विकल्प में फिर से गणनाएं करनी होंगी तथा इसके फायदे घटते जाएंगे।

लिहाज़ा हम सम्भावना की इस दहलीज़ पर हैं और एक अन्तिम आग्रह करना चाहते हैं। विकल्प के पीछे सबसे प्रमुख प्रेरणा यह थी कि सूखाग्रस्त क्षेत्रों व घाटी के आदिवासियों के हितों के बीच की खाई को पाटा जाए। वर्तमान सरदार सरोवर में नर्मदा जल का एक क्षेत्रवार बंटवारा हुआ है। अतः इस पर यह आरोप लग सकता है कि यह सूखाग्रस्त इलाकों की ज़रूरतों के बहाने मध्य गुजरात के पहले से ही जल सम्पन्न क्षेत्रों को और पानी देने का ही प्रयास है। यह दो तरह से होता है। नर्मदा के पानी का बड़ा हिस्सा सूखाग्रस्त इलाकों को नहीं बल्कि गुजरात के अन्य हिस्सों को जाता है। दूसरा कि सूखाग्रस्त इलाकों को पानी मध्य गुजरात कमान क्षेत्र के अन्तिम छोर से देने का प्रावधान है। अतः निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार भी इन क्षेत्रों को पानी शेष गुजरात के एक दशक बाद ही मिलेगा। और यदि हम अन्य कमान क्षेत्रों के अनुभवों को देखें तो पता चलता है कि अन्तिम छोरों तक पानी कदापि नहीं पहुंचता।

हमारा एक सरोकार यह भी रहा कि सूखाग्रस्त इलाकों को पानी पहुंचाने का तंत्र एकदम अलग हो। हमने अपनी पुस्तक में कच्छ व सौराष्ट्र को पानी पहुंचाने के लिए संशोधित प्रस्ताव दिया था। इसके ज़रिए इन क्षेत्रों को शेष गुजरात के साथ-साथ पानी मिलने लगेगा।

हमें पता है कि गुजरात में यह भावना व्याप्त है कि सरदार सरोवर की कोई भी समीक्षा उसे रोकने का ही तरीका होता है। यह भावना न तो उचित है और न ही सही है लेकिन इसके ऐतिहासिक कारण हैं। हमारा सुझाव यह होगा कि कच्छ व सौराष्ट्र के लिए वैकल्पिक जल परिवहन मार्ग तेज़ी से बनाया जाए ताकि बांध की ऊंचाई 90 मीटर होने पर गुजरात के समस्त इलाकों को पानी मिलने लगे।

यानी परियोजना रोकी नहीं जाएगी और गुजरात के समस्त क्षेत्रों को पानी पहुंचाने का संकल्प प्रदर्शित होगा। किन्तु हम समस्त सम्बंधित लोगों तथा खासकर गुजरात के लोगों से आग्रह करेंगे कि थोड़ा रुककर परियोजना की समीक्षा कर लें, यह देख लें कि उनकी सहमति से एक ऐसा विकल्प उभरे जो गुजरात के सूखाग्रस्त क्षेत्रों तथा नर्मदा घाटी के आदिवासियों, दोनों के वैध हितों की पूर्ति कर सके। यदि ऐसा न हो सका तो हमें डर है कि विजेता कोई न होगा न गुजरात के सूखाग्रस्त इलाके, न नर्मदा घाटी के आदिवासी। और सरदार सरोवर परियोजना हमारी कट्टरता का स्मारक बनकर रह जाएगी। *(स्रोत फीचर्स)*

सुहास परांजपे : आई. आई. टी. मुम्बई के स्नातक हैं। वे कई सालों से विभिन्न जन-संगठनों के साथ जुड़कर जल एवं भू-प्रबंधन के मुद्दों पर काम करते रहे हैं।

के. जे. जॉय : समाज कार्य में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है और पानी के समतामूलक बँटवारे के लिए कई जनांदोलनों का भाग रहे हैं। ज़मीनी स्तर पर जल एवं भू-प्रबंधन में लोक संस्थाओं के काम में उनकी खास रुचि है।

अनुवाद : डॉ. सुशील जोशी